डॉ. रवींद्रनाथ मिश्र

अनुवाद की सार्थकता

इन दिनों भारतीय साहित्य, तुलनात्मक अध्ययन, अनुवाद, पत्रकारिता, जनसंचार, प्रयोजनमूलक हिंदी आदि जैसे विषयों की चर्चा खूब हो रही है। परिवेशगत बदलाव एवं बाज़ारवाद के चलते इनके महत्व को विविध रूपों में रेखांकित किया जा रहा है। साहित्य-प्रेमियों का एक वर्ग है जो इन्हें नीरस, शुष्क और सतही विषय मानता है। विवेच्य विषय अर्थात् अनुवाद की परंपरा काफी पुरानी और समृद्ध है फिर भी अनुवाद और अनुवादक को लेकर तरह-तरह की व्यंग्यात्मक एवं कटाक्ष-भरी टिप्पणियाँ की जाती हैं। हमारे यहाँ अनूदित कृति एवं अनुवादक को जो महत्व मिलना चाहिए, वह नहीं मिल रहा है। वर्तमान समय में अनुवाद के बिना काम चलना मुश्किल ही नहीं, नामुमकिन भी है। हमारा उद्देश्य अपनी विरासत, अपनी धरोहर, अपनी संस्कृति आदि को संजोकर रखना और उसे आगे ले जाना है। इसके लिए अनुवाद अपरिहार्य है। अनुवाद की जरूरत वहाँ और भी अधिक महसूस होती है जहाँ समाज अपने में बंद हो। अनुवाद भाषाओं को ही नहीं अपितु देश और काल को भी जोड़ता है।

दरअसल अनुवाद की गंभीरता पर विचार किया जाए तो यह मूल सृजन की ही भाँति है। अनुवाद को पुनर्लेखन कहना अधिक समीचीन होगा। हमारे यहाँ अनुवाद एक प्रकार से पुनर्जन्म है। तुलसी का 'रामचरितमानस' रामायण का पुनर्जन्म है। अनुवाद कार्य के लिए भी मौलिक सृजक जैसी प्रतिभा का होना आवश्यक है अन्यथा अच्छा अनुवाद कार्य नहीं हो सकता। अनुवादक को मूल लेखक के हृदय में पैठकर उसके भावों और विचारों को ग्रहण करना होता है इसलिए उसका कार्य और भी जटिल हो जाता है।

इतिहास गवाह है कि वैदिक काल से लेकर आज तक अनुवाद की प्रक्रिया समाज में विविध रूपों में विद्यमान है। बाइबिल में एक जगह कहा गया है कि "अनुवाद, प्रकाश के आने के लिए वातायन खोल देता है; वह छिलके को छोड़ देता है, जिससे कि हम गूदे का स्वाद ले सकें।" यदि अनुवाद की व्यवस्थित प्राचीन परंपरा न होती तो हिब्रू भाषा में लिखी बाइबिल की पुरानी पोथी को हम नहीं समझ पाते। हमारे वेद, पुराण, उपनिषद्, रामायण, महाभारत, पंचतंत्र

आदि जैसे अन्य महान ग्रंथ संग्रहालयों एवं पुस्तकालयों की शोभा बनकर न रह जाते।

प्राचीन काल में अनुवाद परंपरा का विकास मूलतः धार्मिक प्रचार-प्रसार के लिए हुआ। यूनानियों में बाइबिल के अनुवाद को लेकर दो सिद्धांतों की बात की जाती है – (1) अनुवाद का भाषावैज्ञानिक सिद्धांत; एवं (2) अनुवाद का प्रेरणात्मक सिद्धांत। पहले सिद्धांत के अनुसार अनुवादक को दोनों भाषाओं का अधिकारी विद्वान होना चाहिए, ताकि वह सहज रूप से भाषांतर कर सके। दूसरे सिद्धांत के अनुसार अनुवाद ईश्वर की प्रेरणा के वशीभूत होता है, यानी यह पुनीत कार्य दैवी प्रेरणा के बिना संभव नहीं। यूनानियों ने जहाँ अनुवाद में 'शब्द के लिए शब्द पद्धति' पर जोर दिया वहीं रोमवासियों ने 'अर्थ के लिए अर्थ पद्धति' पर। इस तरह पहले ग्रीक और लैटिन भाषा में बाइबिल के अनुवाद किए गए।

8-10वीं सदी में अरबों ने भारतीय संस्कृत वाङ्मय का अनुवाद अरबी भाषा में कराया। इसी समय प्लेटो-अरस्तू की महत्वपूर्ण कृतियों के भी अनुवाद कराए गए। 16वीं सदी में संपूर्ण यूरोप में अनुवाद के क्षेत्र में प्रोटेस्टैंट धर्म-समर्थक जर्मनीवासी मार्टिन लूथर (1483-1546) का नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय है। इससे पहले फ्रांसीसी, अंग्रेजी, डच, चेक, जर्मन आदि भाषाओं में बाइबिल की नई पोथी के अनुवाद हो चुके थे। लूथर ने 1534 में जर्मन भाषा में बाइबिल का दूसरा अनुवाद किया। इस अनुवाद के द्वारा उन्होंने जर्मन भाषा का परिनिष्ठित रूप सुनिश्चित किया। मार्टिन लूथर ने अनुवाद सिद्धांत के कतिपय मानक बिंदु भी सुनिश्चित किए। इस प्रकार इंगलैंड एवं अन्य पश्चिमी देशों में अनुवाद की सुदृढ़ परंपरा कायम हुई जो आज भी अनवरत विद्यमान है। चीनी यात्री फाह्यान ने 25 वर्षों तक भारत में साधना करके कई महत्वपूर्ण भारतीय पुस्तकों का चीनी भाषा में अनुवाद किया।

भारत में संस्कृत, पालि, प्राकृत, अपभ्रंश आदि भाषा में लिखे गए काव्यों-महाकाव्यों अन्य ग्रंथों के अनुवाद से ही संपूर्ण भारतीय साहित्य के लेखकों को लेखन की ऊर्जा मिली। मुगलकाल के शासकों ने भी अनुवाद कार्य को बढ़ावा दिया। भक्तिकाल के कबीर, जायसी, सूर, तुलसी एवं रीतिकाल के कवियों ने प्राचीन ग्रंथों के अनुवाद से अपने साहित्य को समृद्ध किया। कालांतर में इनकी कृतियों के अनुवाद से अन्य भारतीय एवं विश्व की भाषाएँ समृद्ध हुईं। रूसी विद्वान वारान्निकोव ने 'रामचरितमानस' का अनुवाद रूसी भाषा में करके एक अद्‌भुत कार्य ही नहीं किया अपितु अन्य रूसियों के मन में भारतीय साहित्य, संस्कृति, धर्म, दर्शन आदि के प्रति रुचि पैदा की। आधुनिक काल के युगपुरुष भारतेंदु हरिश्चंद्र का लगभग आधा साहित्य अनूदित रूप में मिलता है।

अंग्रेजी शासन की स्थापना के साथ-साथ भारतीय सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक और शैक्षणिक ढाँचे में तेज़ी से परिवर्तन शुरू हो गए। धीरे-धीरे धार्मिक सत्ता के स्थान पर भौतिक सत्ता स्थापित होने लगी। अंग्रेजी शिक्षा के कारण पारंपरिक अनुशासनों के स्थान पर ज्ञान-विज्ञान के नए-नए क्षेत्र विकसित हुए। इन सबका प्रभाव भारतीय साहित्य की प्रवृत्तियों के साथ-साथ अनुवाद की प्रक्रिया पर भी पड़ा। अब अनुवाद कार्य का उद्देश्य धार्मिक प्रचार

न होकर जन-जाग्रति कार्य से जुड़ा। 19वीं सदी का अधिकांश भारतीय साहित्य राष्ट्रीय चेतना से अनुप्राणित है।

20वीं शताब्दी का स्वतंत्रता संग्राम जहाँ एक स्तर पर जन-शक्ति के बल पर लड़ा जा रहा था, वहीं दूसरी तरफ भाषिक, साहित्यिक और सांस्कृतिक एकता स्थापित करने के लिए अनुवाद के स्तर पर भी लड़ा जा रहा था। जहाँ-जहाँ जिस-जिस भाषा में राष्ट्रीय चेतना से परिपूर्ण साहित्य मिलता था, तुरंत उसका अनुवाद दूसरी भारतीय भाषाओं में कर लिया जाता था। इस दौरान बंगला, हिंदी, मराठी, गुजराती और दक्षिण की सभी भारतीय भाषाओं में खूब अनुवाद हुए। गांधी जी ने तो अनुवाद को राष्ट्रीय एकता का प्रमुख माध्यम माना।

आज़ादी के बाद सामासिक संस्कृति को बढ़ावा देने के लिए अनुवाद संबंधी कई संस्थाओं की स्थापना की गई। अनुवाद कार्य को राष्ट्रीय सेवा की भावना से जोड़ा गया। यह तोड़ने का नहीं अपितु जोड़ने का कार्य करता है। द्वैत में अद्वैत का भाव पैदा करता है। अनुवाद न सिर्फ दो भिन्न भाषा-भाषी लोगों के बीच संवाद का एक सशक्त माध्यम है बल्कि यह सामाजिक-सांस्कृतिक एकता में सहायक है। यह प्रेम की डोर को मज़बूत करके दो भाषा-भाषियों के दिलों में रागात्मक भाव पैदा करता है। भौगोलिक दीवारों को तोड़कर "वसुधैव कुटुम्बकम्" का संदेश देता है। अपने-पराए की संकीर्ण भावना को समाप्त कर आत्म-विस्तार के भाव को प्रबल बनाता है। अनुवाद आज एक ऐसी विधा का रूप धारण कर चुका है, जिसके कारण संपूर्ण विश्व परस्पर एक-दूसरे से संवाद के सूत्र में बंध गया है।

सूचना, विज्ञान, आवागमन के तीव्र साधनों एवं प्रौद्योगिकी के विकास के कारण दुनिया भर के लोगों के साथ आपसी संपर्क बढ़ा है। ज्ञान-विज्ञान के अतिरिक्त व्यापार, उद्योग, पर्यटन आदि के क्षेत्र में दुनिया सिमटकर काफी छोटी हो गई है। भूमंडलीकरण के जमाने में जब मनुष्य एक-दूसरे की आवश्यकताओं और उनकी पूर्ति के कारण आपस में और अधिक निकट हुआ है तब ऐसे में अनुवाद की जरूरत और अधिक बढ़ गई है। आज बहुराष्ट्रीय कंपनियों का बोलबाला है। इन कंपनियों के माल दुनिया-भर के बाज़ारों में फैले हुए हैं। अनुवाद इन मालों की बिक्री में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहा है। संचार-माध्यमों में समाचार, विज्ञापन, धारावाहिकों, खेल-कूद आदि विभिन्न अन्य कार्यक्रमों के लिए अनुवाद आवश्यक हो गया है। अब तो दूरदर्शन पर समाचार की खास-खास बातों को हिंदी और अंग्रेजी में एक साथ पढ़ा जाने लगा है। इसके अतिरिक्त फिल्म के संवाद एवं गानों के अनूदित रूप भी आने लगे हैं जिसके कारण अन्य भाषा-भाषी लोगों को काफी सुविधा हो रही है।

अनुवाद एक ऐसा माध्यम है जिसके द्वारा हम किसी भी देश के परिवेशगत जीवन, संस्कृति, साहित्य, चिंतन विचारधारा आदि से भली-भाँति परिचित हो सकते हैं। इस दिशा में भारतीय और विश्व-साहित्य की अनूदित कृतियाँ सामासिक संस्कृति को बढ़ावा दे रही हैं। विज्ञान के विकास के साथ-साथ सूचना का महत्व बढ़ा है। विज्ञान के क्षेत्र में खोजों की जानकारी वैज्ञानिक तुरंत पाना चाहते हैं। इसे अपनी भाषा में जानने के लिए उन्हें अनुवादक

की जरूरत होती है। भूमंडलीकरण के इस दौर में अनुवाद कार्य की प्रासंगिकता और बढ़ गई है। अब अनुवाद सामान्य कार्य न होकर राष्ट्रीय अस्मिता एवं सेवा कार्य से जुड़ गया है। अनुवाद वह सेतुबंध है जो साहित्यिक अदान-प्रदान, भावनात्मक एकात्मकता, भाषा समृद्धि, तुलनात्मक अध्ययन, राष्ट्रीय सौमनस्य की संकल्पनाओं को साकार कर हमें व्यापक साहित्य जगत से जोड़ता है। महात्मा गांधी अंतरराष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय के कुलपति प्रो. जी. गोपीनाथन के शब्दों में कहा जाए तो "भारत जैसे बहुभाषा-भाषी देश में अनुवाद की उपादेयता स्वयंसिद्ध है। भारत के विभिन्न प्रदेशों के साहित्य में निहित मूलभूत एकता के स्वरूप को निरखने के लिए अनुवाद ही मात्र एक अचूक साधन है। इस तरह अनुवाद द्वारा मानव की एकता को रोकने वाली भौगोलिक और भाषाई दीवारों को ढहाकर विश्वमैत्री को और भी सुदृढ़ बना सकते हैं।"

भारतीय साहित्य के तुलनात्मक अध्ययन के संदर्भ में अनुवाद की सार्थकता और भी बढ़ जाती है। आजकल विश्वविद्यालयों में शोधकार्य के क्षेत्र में तुलनात्मक साहित्य के अध्ययन को विशेष महत्व दिया जा रहा है, जो अनुवाद के बिना संभव नहीं है। देश एवं विश्व स्तर पर पर्यटन को बढ़ावा देने के लिए इसके अध्ययन के लिए अनेक संस्थाओं की स्थापना की जा रही है। मनुष्य स्वभावतः एक-दूसरे की भाषा-संस्कृति को जानना चाहता है और इसके लिए वह अपनी भाषा में अनूदित साहित्य की तलाश करता है। विगत कई वर्ष पूर्व कर्नाटक के ब्राह्मण समाज के साथ खाना खाने के अनुभव ने मुझे वहाँ के ब्राह्मण समाज की संस्कृति को जानने की जिज्ञासा पैदा कर दी। फलस्वरूप मैंने यू.आर. अनंतमूर्ति का हिंदी में अनूदित 'संस्कार' उपन्यास पढ़ा। साहित्य अकादमी (नई दिल्ली) विभिन्न भारतीय भाषाओं की रचनाओं को अनूदित कराने का सराहनीय कार्य कर रही है। इससे दूसरे प्रदेश के परिवेश एवं वहाँ की जीवन-संस्कृति को जानने का भरपूर अवसर मिल रहा है। विश्वविद्यालय अनुदान आयोग, भारतीय अनुवाद परिषद, केंद्रीय हिंदी निदेशालय, नेशनल बुक ट्रस्ट (नई दिल्ली), केंद्रीय हिंदी संस्थान (आगरा), विभिन्न राज्यों की साहित्य अकादमियाँ आदि जैसी अन्य महत्वपूर्ण संस्थाएँ अनुवाद कार्य एवं तुलनात्मक साहित्य को बढ़ावा दे रही हैं। इसके अतिरिक्त 'समकालीन भारतीय साहित्य', 'भाषा', 'अनुवाद' जैसी अनेक अन्य पत्रिकाएँ अनुवाद कार्य को प्रोत्साहित कर रही हैं।

आजकल मीडिया का चारों तरफ बोलबाला है। यह हमारे दैनिक जीवन का हिस्सा बन गया है जिसे हम न चाहकर भी भोगने के लिए अभिशप्त हैं। भारत एवं विश्व की विभिन्न संस्कृतियों से परिचय कराने के लिए जनसंचार माध्यमों को अनुवाद का सहारा लेना ही पड़ता है। भारत एक बहुभाषी देश है। एकता की अनिवार्य कड़ी के रूप में भाषा की भूमिका से भला कौन इनकार कर सकता है?

भौगोलिक, सांस्कृतिक, सामाजिक, धार्मिक आदि दृष्टियों से हमारा देश बहुकोणीय है। एक साथ कई धर्मों, संप्रदायों, जातियों, भाषाओं, आचार-विचारों आदि के समन्वय से बना है भारत का मानचित्र। इस तस्वीर की पहचान में अनुवाद की उपादेयता सर्वाधिक उल्लेखनीय

है। सरकारी कार्यालयों के अलावा सार्वजनिक क्षेत्र के प्रतिष्ठानों, निगमों, कंपनियों, बैंकों आदि को भी अपने प्रशासनिक कार्यों में सरकारी भाषा नीति के पालन हेतु अनुवाद कार्य अनिवार्य हो गया है। केंद्र और राज्य सरकारों के बीच प्रशासनिक कार्यों के लिए भी अनुवाद कार्य की जरूरत पड़ती है। अहिंदी-भाषी राज्यों के संदर्भ में अनुवाद कार्य की महत्ता और भी बढ़ जाती है। भारत सरकार सरकारी कार्यालयों में हिंदी में कामकाज के प्रोत्साहन हेतु करोड़ों रुपए खर्च कर रही है। यह कार्य अनुवाद के बिना संभव नहीं हो सकता।

बाज़ारवाद एवं उपभोक्तावादी संस्कृति में पांडित्य प्रदर्शन वाली बात अब गौण हो गई है। शिक्षा को नकदी फसल बनाने की योजना पर काफी दिनों से विचार-मंथन हो रहा है। जीवन के चार पुरुषार्थों में 'अर्थ' की प्रधानता सर्वोपरि हो गई है। मीडिया द्वारा एक ऐसी मायावी नगरी का निर्माण किया जा रहा है जिसके कारण मनुष्य मूल्यविहीन होकर बेतहाशा अर्थ के पीछे भाग रहा है। शिक्षा का उद्देश्य मात्र धनोपार्जन हो गया है। भूमंडलीकरण के इस दौर में एक-दूसरे की संस्कृतियों को जानने के लिए अनुवाद की प्रासंगिकता और भी बढ़ गई है।

वर्तमान संदर्भों में राष्ट्रीय और वैश्विक स्तर पर कला, साहित्य, संस्कृति, ज्ञान-विज्ञान, सूचना-तकनीकी, मनोरंजन, खेल आदि की नित-नूतन जानकारियों के लिए अनुवाद कार्य की भूमिका और अधिक बढ़ गई है। सूचना प्रौद्योगिकी के इस युग में दुनिया सिमट कर हमारी मुट्ठी में आ गई है। जनसंचार-माध्यमों को सशक्त एवं लोकप्रिय बनाने में अनुवाद कार्य की महत्ता दिन-प्रतिदिन बढ़ती जा रही है। अब तो मनुष्य अपनी बौद्धिक क्षमता से यंत्रों द्वारा अनुवाद कार्य को संपन्न करा रहा है। आज के युग को अनुवाद का युग कहा जाए तो अत्युक्ति नहीं होगी। सोच और व्यवहार के प्रत्येक स्तर पर हम अनुवाद पर आश्रित हैं, अनुवाद के आग्रही हैं।

आज विश्व संस्कृति को समझने और उसे करीब लाने में अनुवाद की भूमिका सर्वोपरि हो गई है। विश्व साहित्य के अनूदित ग्रंथों ने इस कार्य को बहुत आसान बनाया है। इसके अलावा, आवागमन तथा सूचना तकनीकी के क्षेत्र में प्रगति के कारण लोगों का आपस में मिलने-जुलने, बातचीत करने का सिलसिला व्यापक धरातल पर शुरू हो गया है। इसमें भी व्यावहारिक स्तर पर विविध क्षेत्रों में अनुवाद का सहारा लिया गया। यह प्रक्रिया आज भी जारी है। विश्व स्तर पर होने वाली नई-नई खोजों एवं जानकारियों को इंसान अपनी भाषा में जानना चाहता है। इसके लिए अनुवाद ही मात्र एक सहारा हो सकता है। इससे भारत जैसे बहुभाषी देश में अनुवाद की सार्थकता अपने आप स्वयं सिद्ध हो जाती है।

वर्तमान युग में शायद ही जीवन का कोई ऐसा क्षेत्र हो, जिसमें अनुवाद की उपादेयता प्रमाणित न की जा सके। समय को देखते हुए आवश्यक हो गया है कि नए संसाधनों के विकास और व्यापक मानवीय संबंधों के परिप्रेक्ष्य में अनुवाद के महत्व, प्रासंगिकता एवं उसकी सार्थकता पर विचार किया जाए। भूमंडलीकरण के इस दौर में विविध भाषाओं, आचार-विचारों, संस्कृतियों आदि के बीच तालमेल स्थापित रखने के लिए अनुवाद ही सर्वाधिक लोकप्रिय एवं सार्थक माध्यम बन सकता है।

❑